धर्म बनाम अध्यात्म

ब्रह्माकुमार राम लखन,

शरीर मन्दिर है तो आत्मा उसमें स्थापित मूर्ति के समान । बिना मूर्ति के मन्दिर ईट—पत्थरों के मकान के समान होता है। सारा का सारा मदार व महत्व मूर्ति का ही होता है। प्रतिमा पूजनीय—बन्दनीय होती पर खाली कमरे में जीव जन्तु घूमने लगते हैं। ऐसे खण्डहरों में नकारात्मक ऊर्जा का वास होता है। धार्मिकता मन्दिर है तो आध्यात्मिक मूर्ति के समान। शरीर रूपी मन्दिर में निवास करने वाली हम आत्मायें ज्ञानमय हैं तो परमपिता शिव परमात्मा ज्ञान के सागर। हम ज्योतिर्मय बिन्दु है तो वे ज्ञान गुणों के सिन्धु । स्वयं के सत्य स्वभाव को पहचान शक्तियों के परम श्रोत से शक्ति सम्पन्न बनना ही सच्चा अध्यात्म है।

धर्म अर्थात धारणा स्वरूप बनना न कि कर्मकाण्डों का दिखावा करना। धर्म गुरूओं का अनुसरण बाहरी यात्रा है। अध्यात्म आत्मिक चेतना के अध्ययन से अपने सत्य स्वभाव का बोध कराता है। सत्य स्वरूप में स्थित हो परम सत्य परमात्मा से मंगल मिलन मनाते रहना ही सच्चा आध्यात्मिक होना है। अर्थात धर्म शरीर के स्नान की तरह है। अध्यात्म, आत्मा का मन से परमात्मा में मगन रहने वाला स्नान है आत्मा अजर—अमर—अविनाशी है पर शरीर क्षण भंगुर। अर्थात शारीरिक साधनायें धर्म हैं तो आत्मिक उत्थान—अध्यात्म। देवात्मा—महात्मा—पुण्यात्मा पापात्मा कहते हुये आत्मा पर आधारित उच्चता को पाना है। देव शरीर पुण्य—पाप शरीर तो कहा भी नहीं जाता हैं। आत्मिक उत्थान के द्वारा ही कलियुग अन्त में आकर परमात्मा सतयुगी दुनियाँ का नवनिर्माण करवा रहे हैं।

धर्म अर्थात संसारी लोगों द्वारा बनाये हुये नियम, रीति—नीति—कर्मकाण्ड। दूसरों के बनाये हुये मार्गो को मानना—निभाना ही धार्मिक होना है। सदियों से चले आ रहे रीति रिवाजों की नकल करते रहना यानी अंधविश्वासी बने रहना। भय—लोभ बस कर्मकाण्डों को दुहराते रहने को ही लोग आस्तिक होना मानते हैं। मैं सबसे अधिक पूजा—पाठ, व्रत—उपवास, तीर्थयात्रा—दान—पुण्य करता हूँ। दूसरों से तुलना करते रहना ही ऊँचा धार्मिक होना है। धार्मिक लोगों की प्रतियोगिता बाहरी संसाधनों को पाने के लिये कर्मकाण्डों को दुहराते रहना है। संसार व समाज के लिये उलझे रहना ही धार्मिकता की निशानी है। अध्यात्म स्वयं की खोज है। उसकी प्रतियोगिता दूसरों से नही स्वयं के विकार—बुराइयों को जीतने से है। आध्यात्मिकता भटकाव और बेचैनी से दूर स्थिरता—एकाग्रता की ओर ले जाती है। बाहरी दौड़ को दूर भगा देती है। वासनाकी जगह परमसंतुष्टता से जीना सिखाती है। वाह्य जगत की तलाश की बजाय अन्तर्जगत के सुकून को पानी ही आध्यात्मिक होना है

अध्यात्म समर्पण भाव है। खुद को खुदा से जोड़कर उसकी सर्वकलाओं को स्वयं में समाने की कला है।

श्रद्धा नहीं भय बस धार्मिक लोग ज्यादा से ज्यादा पूजा—पाठ करते रहते हैं। धार्मिक ग्रन्थों के ही अनुसार न चलने से वे इष्टदेव के नाराज होने से डरते रहते हैं। मतलब बस ही प्रार्थना करते हैं। भय से न वह इष्ट के समान बन पाते न ही आत्म

विश्वास जगा पाते हैं। आध्यात्मिक आत्मायें विश्व परिवर्तक बन परमात्मा समान बनने की खुशी में गद्गद् रहती हैं। वह न भगवान ना ही इन्सान से डरती बल्कि हर हालत में आनन्दित रहती हैं। भौतिक वासनाओं से दूर व सदा संतृप्त रहती हैं। खुदा की प्यारी बनी रहती हैं। धार्मिक लोगों को और चाहिये की कामनायें बर्हिमुखी बनाये रखती है। मांगते रहने से उसका पेट कभी नही भरता। सदा उसे कुछ न कुछ मिलता रहे पर कम कुछ भी न हो यदि वह दान देता भी है तो बदले में हजारों गुना फल चाहता है। उसका दान गुप्त नहीं होता हैं। बल्कि अपना गुणगान कर अभिमान को जगाता रहता है। जीवन में इज़ाफा के लिये मन उलझा ही रहता है। मांगे पूरी न होने से जीवन में शिकायतों की ढेर लगी रहती है।

आध्यात्मिक व्यक्ति कहता रहता मेरा कुछ भी नहीं। मैं भी उसी का हूँ। वह लुटाने में विश्वास करता है। उसकी कोई मांग नहीं। सुविधायें व संसाधन उसे आनन्द में बाधक लगते हैं। वह खुलकर देता क्योंकि स्वयं को लबालब भरा महसूस करता है। वह बाँटता रहता क्योकि खोने के लिये उसके पास कुछ है नहीं। चुपके से बाँटने में उसे बहुत आनन्द मिलता है। वह देने में ही पाता है इसलिये उसके कोश में बृद्धि होती रहती है। शिव बाबा ही देने वाला है इसलिये वह सोचता कि मांगू भी तो क्या? जो दिया है वही काफी है फिर मांगा क्यूँ जाये। कुछ भी मांगो पर साथ कुछ भी नहीं जायेगा। इसलिये जो भी उससे मिला है आभार व्यक्त करते हुये खुशियाँ लुटाते रहता हैं। कल में जीने वाले धार्मिक कहलाते हैं। कल क्या होगा। इसके बारे में परमात्मा के सिवाय कोई नहीं जानता है। पर धार्मिक लोग कल के इन्तजार में आज को गंवा देते हैं। वे अपने कर्म और मेहनत से ज्यादा भाग्य व चमत्कार के हाथों में खेलते हैं। कार्यो को टालना व कल पर आश्रित रहना उनका स्वभाव बन जाता है। आध्यात्मिक आदमी आज और अभी पर भरोसा करता है। वह न आने वाले कल में उलझता है न ही बीते हुये कल के बारे में चिन्तित रहता है। वर्तमान में जो हो रहा है उसी का उसे महत्व रहता है। वह जहाँ रहता वहीं सुख तलाशता है। बर्तमान समय ही उसके लिये सही समय है। इसलिये वर्तमान में समग्रता से जीता है। सदा सुखी व सफल रहता है।

धार्मिक लोगों की परंपरायें, मान—मर्यादायें, कायदे—कानून व सीमायें अलग—२ होती हैं। उसी के तले वह जीते हैं। उसे कभी ग्लानि तो कभी अपराध बोध सताता रहता है। धर्मो में इतनी मान्यतायें होती जिन्हें पूरा करना आसान काम नहीं होता। फलत: भयभीत रह नजर चुराता रहता है। किसी भी बात पर केन्द्रित हो विचार—विनिमय नहीं करता। खिले हुये फूल को चाहता पर मुरझायें को पसन्द नहीं करता अर्थात जीवन के सत्य को स्वीकारना नहीं चाहता है। वह जानना ही नहीं चाहता की जीवन क्या है ? हम कौन है व कहाँ से आये हैं? दुखी हैं तो क्यों ? दु:ख का निवारण कर जीवन का वास्तविक सुख कैसे प्राप्त करेंगे। क्या करें कि इस जीवन को सही ढंग से जी सके? आदि—२ सच को जानने के बाद शीशे की तरह सब साफ—२ दिखाई देने लगेगा इसके डर से वह भागता रहता है। अध्यात्म यानी अनादि—अविनाशी जो बना बनाया है उसका बोध होना। जो भी कुछ है उसके प्रति होश। हर स्थिति—परिस्थिति के प्रति स्वीकार भाव। तन की आखों के साथ दिव्य नेत्रों से भी देखना। आन्तरिक अवलोकन। पूर्ण

आनन्दमय दृष्टाभाव। साक्षी परन्तु जागृत स्थिति। आध्यात्मिक होना अर्थात जाग जाना। जो भागेगा वह जानेगा कैसे ? नीर—क्षीर विवेक से ही हम सक्षम हो सकेंगे। त्वरा नहीं धैर्य व शान्तिमय जीवन हो। सकारात्मक अवस्था को जागरण कहा जाता है। व्यापक दृष्टिकोण व सहजता। जागृत होने के बाद जीवन में कुछ चुभता नहीं। दु:ख अशान्ति विलीन हो जाने से सभी चीजें आइने की तरह साफ—२ दिखती है।

इतने सारे धर्म और इतनी मान्यतायें ? संसार की सारी लड़ाइयाँ प्राय: धर्म के नाम पर हुई हैं। धर्म सदा अपने साम्राज्य का विस्तार चाहता है। धार्मिक लोग भी देश—दुनियाँ में अपना ही नाम रोशन करने में जुटे रहते हैं। अस्पताल—मन्दिर, दान—पुण्य करके अपना अस्तित्व दिखाना चाहते हैं। अपनी करतूतों को
धर्म की ढाल बनाकर छिपाते हैं। जीवन से ज्यादा मरने के बाद क्या होगा की फिक्र लगी रहती है। उनके मान—सम्मान पर किसी में उँगली उठाई कि दंगा शुरु। सारे मंत्र—पाठ—चौपाइयाँ धरी रह जाती हैं। सद्भावनायें पन्नों में सिमट जाती हैं। हरेक धर्म का बाद अपने ही को सर्वोच्च साबित करने में समाज के पतन—पराभव का निमित्त बना हुआ है। आध्यात्मिक व्यक्ति भविष्य क्या वर्ममान के लिये भी कुछ नहीं बचाता है। नाम—मान—शान को आध्यात्मिक उत्थान के लिये बाधक मानता है। क्योंकि ऐशो—आराम के लिये तनाव भी बढ़ेगा। फलत: ऊर्जा नष्ट होते रहने से एकाग्रता घटती जायेगी। वह परमपिता ही नहीं स्वयं से भी दूर होने लगेगा। जबकि आत्मिक वृत्ति से परमात्म स्मृति ही सर्वोच्च कमाई है। धार्मिक का ध्येय परिणामों पर टिका रहता धार्मिकता में मन कम लगता तो भौतिकता के पीछे भागने लगता हैं। जरा सा कष्ट आने पर नैया डगमगाती रहती है। इसीलिये दु:ख—हताश—मजबूर दिखते है। आध्यात्मिक व्यक्ति आनन्दमय जीवन की कला सीख जाता है। उसके लिये कोई चीज बेकार नहीं पर नित नवीन रहती है। साधना में ही आनन्द आता है। जागृत रह परम शान्ति का अनुभव करता है। निखरता जाता है।

- ब्रह्माकुमारीज् वार्ता फिचर्स
www.bkvarta.com